International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 4; Issue 5; May 2017; Page No. 363-364

संगीत में लय एवं ताल का महत्व

शुभम वर्मा

अतिथि प्रवक्ता, संगीत विभाग, सी0 एस0 जे0 एम0 वि0 वि0, कानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

भारतीय संगीत गायन, वादन एवं नृत्य तीनों विधाओं का मिश्रण है और इन्हीं से संगीत जैसा पवित्र शब्द पूर्ण रूप से सार्थक है। ललित कलाओं में संगीत कला सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। संगीत के दो मुख्य उपादान हैं– स्वर एवं लय। इन्हीं उपादानों के माध्यम से संगीतज्ञ संगीत का सृजन करता है किन्तु संगीत कला में लय का स्थान अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। लय के बिना स्वर की उत्पत्ति असंभव है। संगीत में लय एवं ताल का प्रयोग प्राचीन काल से हो रहा है। ताल के बिना भी संगीत अधूरा है। निश्चित ताल गति के परिणामस्वरूप संगीत के क्रमिक आरोह, अवरोह, विराम आदि अत्यंत प्रभावशाली हो जाते हैं। वास्तव में संगीत की प्रत्येक विधा गायन, वादन एवं नृत्य में लय एवं ताल का प्रयोग अत्यंत ही महत्वपूर्ण है।

मुल शब्दः स्वर, लय, ताल, लयकारी, आरोह, अवरोह, आड़, कुआड़, बिआड़, झूमरा, गजझम्पा, कुम्भ।

प्रस्तावना

भारतीय संगीत गायन, वादन एवं नृत्य तीनों विधाओं का मिश्रण है और इन्हीं से संगीत जैसा पवित्र शब्द पूर्ण रूप से सार्थक है। ''गीतं वाद्यं तथा नृत्यम् त्रयं संगीतमुच्यते''[1]। ललित कलाओं में संगीत का स्थान श्रेष्ठ है क्योंकि संगीत में प्रेषणीयता होती है। संगीत में भी स्वर, लय एवं ताल की आवश्यकता होती है। संगीत के दो मुख्य अंग है– स्वर एवं लय। स्वर का प्रयोग रागों में और लय का प्रयोग विशेष रूप से तालों में किया जाता है। लय शाश्वत है। लय का तात्पर्य गति से है। लय की प्रमुख विशेषता नियमितता है। मनुष्य के शरीर में सासों का आना–जाना, हृदय का धड़कना और नाड़ी का स्पंदन आदि सभी को गति नियमित है। स्वरों की उत्पत्ति लय के बिना असम्भव है।

संगीत में गायन, वादन एवं नृत्य में जो समय लगता है उसकी गति लय है। इसी लय के मापने के लिए ताल की उत्पत्ति हुई। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में लय की व्याख्या निम्न शब्दों में की है–

''त्रयो लयाश्च विज्ञेया द्रुतमध्यविलम्बिताः।
छन्दोऽक्षरपदानां हि समत्वं यत् प्रीतितम्।
कलाकालान्तर कृतः स लयो मानसंज्ञितः।''[2]

लय, जो सृष्टि का आधार है। इस ब्रह्माण्ड में सारे ग्रह, नक्षत्र सभी एक लय के अधीन होकर कार्य करते हैं। इस लय में लेशमात्र भी त्रुटि होने पर अनिष्ट और विनाश की आशंका रहती है। सूर्य का उगना और डूबना, चन्द्रमा और तारों का दिखना हमारे सारे त्योहार, रीति रिवाज, दिनचर्या सभी लय के अन्तर्गत हैं। लय बहुत स्थूल है और बहुत सूक्ष्म भी। वैसे समय की गणना सेकेण्ड, मिनट, घण्टे, दिन आदि के माध्यम से होती है लेकिन संगीत में हम इसे मात्राओं के माध्यम से बयां करते हैं।

समय के समान गति को लय कहते हैं। वह गति जो बहुत शीघ्रता से परिवर्तित हो, उसे मापना कठिन होगा जिसे हम माप सके वही संगीतज्ञों के योग्य होगी। लय की कसौटी है उसकी बारम्बारता और लय से लयकारियों का सृजन होता है जिसे हम एक मात्रा में जितनी क्रियायें करें इसे लयकारी कहते हैं। एक में एक बराबर की लय, एक में डेढ़, डेढ़गुन और इसी तरह एक में दो, दुगुन की लय ये सब लयकारी के रूप हैं। जब हम लय का रेखाचित्र बनाते हैं तो एक तटस्थ बिन्दु है एक में एक है ऊपर की तरफ चलेंगे तो लय बढ़ेगी नीचे की तरफ चलने पर लय घटेगी। घटती हुई लय को विलम्बित और बढ़ती हुई लय को द्रुत की श्रेणी में रखा जाता है। मुख्यतः लय के तीन प्रकार हैं–

1. विलम्बित
2. मध्य
3. द्रुत

लयकारी को विद्वानों ने इस प्रकार वर्गीकृत किया हैः–

1. आड़

मोटे तौर पर किसी भी वक्र या आड़ी तरछी लय को आड़ कह सकते हैं लेकिन आड़ का अर्थ है एक मात्रा में डेढ़ मात्रा कहना जिसे हम दो में तीन अर्थात 3/2 = 1S2 S3S लिखकर कहते हैं। इस लयकारी के बारे में यही एक विचारधारा है। इस लयकारी को जब हम पलट देते हैं अर्थात् तीन मात्रा में दो मात्रा 2/3 = 1S S2 SS लिखकर कहते हैं।

2. कुआड़ लय

इस लयकारी के बारे में दो विचारधारायें हैं। पहली विचारधारा के अनुसार एक में सवा, दो में ढाई, 4 में 5 को कुआड़ लय कहते हैं–

''4 में 5 5/4 = 1SSS2 SSS3S SS4SS S5SSS

लिखकर कहते हैं।''[3] दूसरी विचारधारा के अनुसार सवा दो गुन 4 में 9 मात्रा कहने या लिखने को कुआड़ की लयकारी कहते हैं। आमतौर पर पहली विचारधारा अधिक मान्य है।

3. बिआड़ लय

इसके बारे में भी दो विचारधारायें हैं। पहले के अनुसार पौने दो गुन को बिआड़ की लयकारी कहते हैं अर्थात् चार मात्रा में सात मात्रा कहने या लिखने को बिआड़ की लय कहते हैं।

''4 में 7 = 7/4 = 1SSS2SS S3SSS4S SS5SSS6 SSS7SSS

लिखकर कहते हैं।''[4]

दूसरे मत के अनुसार कुआड़ की आड़ को बिआड़ की लयकारी कहते हैं अर्थात् 9/4 × 3/2 = 27/8 को बिआड़ की लयकारी कहते हैं। ये अत्यंत विस्तृत है इसलिए इस विचारधारा को मानने वाले लोग बहुत कम हैं।

ताल की उत्पत्ति का उल्लेख वेदों, ग्रन्थों एवं पुराणों में मिलता है। काल की गति सदैव अग्रगामी होती है। संगीत में लय एवं ताल का प्रयोग अत्यंत प्राचीन काल से चला आ रहा है। गीत की आत्मा तो लय है और उसके सृजन के लिए ताल उसका नियम है। इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, ताल एवं लय एक दूसरे के पूरक हैं और दोनों ही अविभाज्य हैं। लय यदि धड़कन है तो ताल हृदय और हृदय में ही जीवन है। इसलिए ताल संगीत का प्राण है। जिस तरह प्राण निकल जाने पर शरीर मृत हो जाता है। उसी तरह ताल विहीन संगीत निर्जीव एवं नीरस हो जाता है। ताल का मुख्य उद्देश्य रंजकता देना है। ताल के बिना संगीत की कल्पना करना असम्भव है। डॉ0 अरुण कुमार सेन के अनुसार ''..... निश्चित ताल गति के फलस्वरूप ही संगीत के क्रमिक आरोह, अवरोह, विराम आदि अत्यंत प्रभावोत्पादक हो जाते हैं।''[5]

संगीत का अस्तित्व लय एवं ताल पर ही टिका होता है। ताल के बिना संगीत अपूर्ण है। जैसे किसी पक्षी का उड़ना उसके पंखों पर निर्भर करता है उसी तरह संगीत में गायन, वादन एवं नृत्य तीनों विधाओं की क्रिया ताल पर ही निर्भर है। ताल के बिना संगीत पूर्ण रूप से निष्प्राण या निर्जीव हो जायेगा। तालों से संगीत में विभिन्न रसों का निष्पादन होता है। दादरा, कहरवा आदि तालों से श्रृंगार रस की उत्पत्ति होती है। एक ताल व झूमरा से शांत रस, रूपक से करुण रस, कुम्भ व गजझम्पा तालों से अद्भुत रस की निष्पत्ति होती है।''[6] संगीत में ताल की महत्ता का वर्णन अनेक लोगों ने किया है। भरतमुनि के अनुसार–

''यस्तु तालं न जानाति न स गाता न वादकः।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन कार्य तालावधारणम्।''[7]

अन्त में हम ये कह सकते हैं कि संगीत में लय एवं ताल दोनों ही अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। ये दोनों उपादान संगीत के प्राण हैं जेसे दीपक में बाती का, फूल में सुगन्ध का, स्त्री की माँग में सिन्दूर का महत्व है। ठीक उसी तरह संगीत की प्रत्येक विधा, गायन, वादन एवं नृत्य आदि में लय एवं ताल समान रूप से महत्वपूर्ण है।

संदर्भ सूची

1. शारंगदेव– संगीत रत्नाकर, पृ0 6
2. जमुना प्रसाद पटेल– ताल वाद्य परिचय, पृ0 213
3. पं0 गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव– ताल परिचय भाग–2, पृ0 62
4. पं0 गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव– ताल परिचय भाग–2, पृ0 63
5. डॉ0 अरुण कुमार सेन–भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृ0 49–50
6. बसंत–संगीत विशारद, पृ0 556
7. श्री बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, संपादक तथा व्याख्याकार–नाट्यशास्त्र, पृ0 211